International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol.10 No.1 Sept – Oct 2022

मुक्तिबोध की काव्य चेतना

प्रा.डॉ.मानीतकुमार अमृतराव वाकळे
खोलेश्वर महाविद्यालय, अंबाजोगाई,जि. बीड.
Corresponding Author- **प्रा.डॉ.मानीतकुमार अमृतराव वाकळे**
Email id: wakalema@gmail.com
DOI- 10.5281/zenodo.7266743

भूमिका :

गजानन माध्व मुक्तिबोध एक ऐसे कवि है, जो आम जनता की छटपटाहट, पिडा और त्रासदी को अपने 'काव्य' के माध्यम से अभिव्यक्त करते है। हिंदी साहित्य में उनकी कविता 'तारसपाक' तथा 'प्रयोगवाद' के अनन्य साधरण कवि के रूप में जाने जाते है । उनका जन्म सदाहरण् परिवार में होने के कारण अभावग्रस्त जीवन की अनुभूति, आर्थिक दुर्बलता का अहसास उनकी कविता में सहजतासे झलकता है । उन्होंने भारतीय माजव्यवस्थ को नजदिकसे जाना था वर्गवादी भावना, जातिवाद स्वरूप से वे अच्छी तरह से वाकिफ थे इसिलिए उनके चिंतन का रूख मार्क्सवादी बनपड़ा है । "डॉ. इन्द्रनाथ मदान के अनुसार मुक्तिबोध पर टालस्टाय, वर्गसा और मार्क्सवाद का स्पष्ट प्रभाव है । उनकी कविताओं में तथ कवीत अस्तित्वादियों के क्षणवाद के स्थान पर शाश्वत आशावाद, जीवन की विद्रुपता और क्षणभंगूरता के स्थान पर उनकी सुंदरता और गतिशीलता, निराशा के स्थान पर आस्था तथा व्यक्ति के दर्पित अहं के स्थान पर समाष्टि की चेतना चित्रित है। काव्य सृजन के प्रति उनका दृष्टिकोन सर्वदा प्रगतिशील रहा है, अंत: इन्हे आधुनिक हिंदी कविता के बाद के किसी संकरे कटघ्रेमें सीमित रखना उचित नही ।"[1] वह संपूर्ण मार्क्सवादी नही है उनपर भारतीय मानवतावादी संस्कृति का प्रभाव है । इसलीए उनका दर्शन-चिंतन का स्वरूप भारतीय मानवतावादी मार्क्सवादी है । उनके चिन्तन का सर्वप्रमुख आयाम है मार्क्सवाद। मार्क्सवादी चिंतन का आधार द्वन्द्वत्मक भैतिकवाद है । अनास्था, विद्रोह एवं आत्मवादी दृष्टि उसकी प्रमुख पहचान है । मुक्तिबोध ने इनके अतिरिक्त वर्तमान जीवन की विद्रुपता को भी विभिन्न प्रकार से साकार किया है। सभ्यता और संस्कृति के मुखौटो को पहनकर शोषण और भ्रष्टाचार के मसीही षडयंत्र चक्र को अवरूध करने में कविने अपनी पुरी शक्ति लगादी है । उनके उस काव्य-प्रयास को हम एक और जहां विध्वंस चेतना का नाम दे सकते है वही मानवीय जिजीविषा भी कह सकते है, क्योंकि कवि समस्त विरोधों, विद्रोह, आक्रोश एवं क्षोभ का निष्कर्ष निराशा अथवा असहायता के होकर जीवन के साहस से जीने का परोक्ष प्रयास है। यहीं कवि मुक्तिबोध अपने समानधर्मा अन्य प्रगतिशील माक्सवादी चिंतको से अलग पहचाने जाते है । चारों और घिरे पिड़ाओं के चक्रव्यूहों के माध्यएकांकी होते हुए भी उनकी जीने की कोशिश, मानवता का एक चरम आयाम प्रस्तुत करती है। इस प्रकार उनकी चिंतन धारा को कोई एक नाम या शीर्षक नही दिया जा सकता। डॉ. नामबर सिंह के शब्दोंमें "नयी कविता में मुक्तिबोध की स्थिति वही है, जो छायावाद में निराला की थी। निराला के समान ही मुक्तिबोध ने भी अपने युग के सामान्य काव्य मूल्यों का प्रतिकात्मक करने के साथ ही उसकी सीमा को चुनौती देकर उस सर्जनात्मक विथिष्ठता के चरितार्थ किया, जिस में समकालीन काव्य का सही मुल्यांकन संभव हो सका।"[2]

मुक्तिबोध के चिंतन का आधार तथा काव्य की मान्यताएँ मानव है मानव को केंद्र मानकर उन्होंने काव्य की रचना की है। अपनी कविता के आधरभूत दर्शन में कुछ बुनियादी सवाल उठाए है। वो कहतें है 'बुनियादी सवाल अपना पहचान न पाया मैने कहा "बताया है अपने उसे मैं कौन हूँ, क्या हूँ, क्यों हूँ, कैसे हूँ यह सब बताइए।" यह मानवतावादी प्रगतीशील चिंतन मुक्तिबोध की सबसे अलग पहचान कराती है।

1. लोकहितवादी चेतना :

'मुक्तिबोध' ने जिन्दगी के वैविध्य, सभ्यता की नकाब ओढ़े समाज, डरावने जीवन, जीवन व्यापी शून्यता और संत्रस्त जिन्दगी को ऐसे कोण से देखा था जिससे उसका सारा नक्शा उनके मन में था। यही नक्शा विविध संदर्भो में विविध प्रतीकों और बिम्बों में बद्ध होकर कविताओं में बोलता नजर आता है। एक लूटती और पीटती हुई जिन्दगी का मानचित्र मुक्तिबोध की कविताओं में है और सही बात यह है, कि यह भारत के एक हिस्से का; बड़े हिस्से का असली मानचित्र है। प्रश्न है मुक्तिबोध द्वारा खींचे गये इस नक्शे के पीछे उनकी कौनसी भावना काम कर रही है? मैं समझता हूँ वह लोकहितवादी चेतना ही है। यह चेतना उनकी आत्मा के आयतन में कहीं गहरे समाई हुई है। वे सार्वजनिक वेदना व साधारण की पीड़ाओं को नजरअन्दाज कर ही नहीं सकते थे । इसलिए नित्य सूखे डंठल, सूखी डालें, टहनियाँ खोजती हुई और सभ्यता के जंगल में अग्नि के काष्ठ खोजने वाली आत्मा माँ-जीवंत कवि की आस्था है- लोकहितवादी चेतना की ही अभिव्यक्ति है। वह किसी लोकोत्तर सत्य को टोह रही है। "द्वन्द्वात्मक संघर्षमयी स्थिति में पिरोई हुई प्रगतिमान प्रक्रिया के संश्लिष्ट रूप की अभिव्यक्ति ही वह माँ है। "मुक्तिबोध की कविता यात्रा सुविधओं से भरी यात्रा नहीं रहीं है। छायावादी काव्य संस्कारों सें मुक्त होकर प्रगतिवाद की कमियों पर पैनी दृष्टि रखते हुए उन्होंने नई कविता को दुर्लभ आयाम दिए है। मुक्तिबोध आनंद और उल्हास के कवि नहीं है । और नही उनकी कविता संतुलन और सामंजस्य का कोई संदेश देती है। वे तो रक्ताल जीवन यथार्थ के भोक्ता कवि है । और चूँकि यथार्थ सीध सरल, सपाट, नही होता, अत: अपनी कविताओं की तुलना उन्होंने सांप और हिडिम्बा से की है।"[3] यही मुक्तिबोध की आस्था है।' उनकी यह आस्था गुट से अलग, सम्प्रदाय से कटी हुई एक जीवंत आस्था है। लोकहितवादी चेतना की अच्छी अभिव्यक्ति 'मुझे याद आते हैं', 'चकमक की चिनगारियाँ', 'डूबता चाँद कब डूबेगा' और 'एक अन्तर्कथा' आदि कविताओं में हुई है। लकड़ी बीनती, गर्म भार से झुकी होकर भी गृहस्थी चलाने के लिये कपड़े धोती, मजदूरी करती, मुफलिसी के टूटे-फूटे घरों में रहने वाले, लठ्ठधारी बूढ़े पटेल बाबा, किसान दादा, दाढ़ी-धारी देहाती मुसलमान चाचा और बोझा उठाये आती-आती माँए-बहनों, बेटियों और झरने के किनारे पर शिशु को छोड़कर जाने वाली स्त्रियों की जो प्रतिमाएँ इस संकलन में मिलती हैं, उनकी पीछे कवि की कल्याण कामना का ही प्रसार दिखाई देता है। एक कविता का यह अंश देखिये और उस अनुमान को सच्चाई में बदल डालिये कि आधुनिक सभ्यता संकट की प्रतीक रेखा है-

नीचे उतरो, खुरदरा अँधेरा सभी ओर/ वह बड़ा तना, मोटी डालें,

अधजले फिके कण्डे व राख/ नीचे तल में।

वह पागल युवती सोयी है। मैली दरिद्र स्त्री अस्त व्यस्त

उसके बिखरे हैं बाल व स्तन लटका-सा / अनगिनत कसना-प्रस्तों का मन अटका था।

उनमें जो उच्छृखल था, विशृंखल भी था, / उसने काले पल में इस सी को गर्भ दिया।

शोषिता व व्यभिचरिता आत्मा को पुत्र हुआ / स्तन मुँह में डाल, मरा बालक। उसकी झाँई

अब तक लेटी है पास उसी की परछाई। / उसको मैंने सपनों में कई बार देखा।।

जीने के पहले मरे समस्याओं के हल।।/ ओ नागराज! बुपचाप यहाँ से चला।

2. सामाजिक जीवन का चित्रण :

काव्य में समाज-संक्ति समसामयिक परिवेश है, स्पष्ट कीजिए। उत्तर : 'मुक्तिबोध' का काव्य एक सामाजिक जीवन के व्याख्याता का काव्य है। उसमें निजता की पीठिका पर परता का शब्दांकन है। वह हर हालत में समाज से संयुक्त है। यह संपत्ति जन-संपक्ति का ही पर्याय है। उन्होंने अपने युग-मानव की पीड़ाओं, असमर्थताओं और विडम्बनाओं को देखा भी था और भोगा भी था। इसी से उनका काव्य युग से संघर्ष करते जन-जन के अंत:करण औ भौतिक-मानसिक संघर्ष को प्रतिरूपित करता है। उनका आत्मद्वन्द्व निजी संघर्ष जन चेतना की अभिव्यंजना के लिए की गई सार्थक तैयारी है। सही अर्थों में मुक्तिबोध जन समाज को सुखी और खुशहाल देखना चाहते थे। इसी चाहत के कारण वे जीवन, समाज और जन-जीवन के भीतर पहलुओं तक का 'एक्सरे' प्रस्तुत कर गये हैं। जिस तरह कोई जासूस किसी रहस्य का पता लगाने के लिए सम्बन्धित स्थितियों को बारीकी से पकड़ता है उसी तरह मुक्तिबोध ने भी मानव समाज से सम्बन्धित हर संदर्भ; हर घटना; हर पीड़ा और हर एक संगत-असंगत स्थिति की करीब से जाँच पड़ताल की है।

इसी समाज से संसिक्त और परिवेश सजगता के कारण डॉ. रमेश कुंतल मेघ । उन्हें लोक जीवन का जासूस कहा तो शमशेर ने लिखा : "मुक्तिबोध हमेशा एक विस्तृत 'कैनवॉस लेता है, जो समतल नहीं होता, जो सामाजिक जीवन के धर्म क्षेत्र और व्यक्ति-चेतना की रंग । को निरंतर जोड़ते हुए समय के कई काल को प्रायः एक साथ आयामित करता है।" "वे समाज के ब्रह्मदवों का पर्दाफाश करना चाहते है; उनका असली चेहरा दिखाना चाहते हैं। उन नीतियों को बदल देना चाहते है, जिनके चलते अमीरों के मुख दीप्त और गरीबों के मुख श्रीहीन नजर आतें हैं। जिनकी वासना और लिप्सा विक्षिप्त युवतीयों को भी नही बख्शती और वे उनकी लिजलिजी वासना को ढोने को विवश हो जाती है।"

"वह पागल युवती सोयी है । मैली दरिद्र स्त्री अस्त-व्यस्त उसके बिखरे है बाल व स्तन है लटकासा, अनगिनत वासना ग्रास्तों का मन अटकाथ उनमें जो उच्छृंखल विश्रृंखल भी था। उसने काले पल में इस स्त्री को गर्भ दिया। मुक्तिबोध एक समाज चेता रचनाकार है। वे अंधेरों से मुँह नही फेरते बल्कि अंधेरे की ओर उंगली उठाने का साहस रखते है उस का दुष्परीणम भी वे जानते है, फिर भी वे अंधेरे को उजागर करते है।"[4]

वास्तविक यह है, कि मुक्तिबोध की अधिकांश कविताएँ उनकी समाज संसिक्ति को रेखांकित करती हुई वर्तमा, परिवेश की भयावह, दंशक और अभिशप्त जीवन स्थितियों की तीखी व्यंजनाएँ हैं। वे समसामयि परिवेश की विविध विसंगतियों का दहकता शिलालेख हैं। उनमें जन-जन की पीड़ा का इतिहास छिपा हुआ है और विस्मित करने वाली बात यह है, कि यह इतिहास स्वयं बोलता है- मौन नहीं अधिकांश कविताओं में नायक की भूमिका निभाता हुआ मैं पूरे समाज व जनजीवन में विचरण कर उसकी तस्वीरें प्रस्तुत करता रहा है। यही वजह है, कि 'मैं' मात्र कवि नहीं है; पूरे समाज का है जो काव्य नायक के रूप में चित्रित हुआ है । ..

3. वर्गहीन समाज-स्थापना :

मुक्तिबोध के काव्य-संसार को गहरी नजर से देखें तो साफ जाहिर होता है कि वे एक वर्गरहित चौर शोषणरहित समाज की स्थापना के लिए लालायित थे। वे जानते थे कि मानवीय समाज, संस्कृति और जीवन-दृष्टि को स्वस्थ जीवन मूल्यों से जोड़ना अनिवार्य है। इसके लिए व्यक्ति को नात्मसाक्षात्कार की गलियों से गुजरना पड़ेगा- अपने 'स्व' का संशोधन, परिशोधन करना पड़ेगा, तभी वर्गहीन और शोषणहीन स्वस्थ समाज का ढाँचा खड़ा हो सकेगा। स्वार्थ, संकीर्णता और भौतिक तिख-सुविधाओं के मलबे को हटाना पड़ेगा; उसके दूह में आग लगानी पड़ेगी। कहना गैर जरूरी मग रहा है, कि मुक्तिबोध का समस्त काव्य इसी ललक की पूर्ति का बृहत्तर आयाम प्रस्तुत करता शे एक स्थान पर कवि साफ लिख गया है :

न समस्या एक- / मेरे सभ्य नगरों और ग्रामो में
सभी मानव / सुखी, सुन्दर व शोषणमुक्त कब होंगे?

'चकमक की चिनगारियाँ' कविता में मुक्तिबोध ने अपनी कविता को 'आवेगत्वरित कालयात्री' हते हुए उसे 'विश्वशास्त्री' और 'जनचरित्री' कहा ही इसलिए है, कि वर्गहीन समाज का निर्माण तभी सम्भव है- जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा का स्वप्न साकार तभी होगा; जब हम शोषण और स्वार्थ के हथियारों-गुब्बारों को छोड़ देंगे। कारण 'शोषण की अतिमात्रा' स्वार्थों की सुख यात्रा, जब-जब सम्पन्न हुई, आत्मा से अर्थ गया, मर गयी सभ्यता। अत: मुक्तिबोध जिस शोषण और अत्याचार से मुक्ति चाहते है- भीतर और बाहर के दलिद्दर से मुक्ति की चेष्टा करते हैं, वह इसीलिए तो कि एक वर्गहीन समाज स्थापित हो सके। शोषण, अत्याचार और जड़ता से मुक्ति पाने के क्रम में ही कवि सामने फैले विविध प्रश्नों पर पुनर्विचार करता है : "मेरे सामने हैं प्रश्न, क्या होगा कहाँ, किस भाँति, मेरे देश भारत में, पुरानी हाय में ले, किस तरह से आग भभकेगी। उड़ेगी किस तरह भक से, हमारे वक्ष पर लेटी हुई, विकराल चट्टानें।" असल में वर्गहीन और शोषणहीन समाज की स्थापना के लिए कवि प्रतीक्षा नहीं करना चाहता है और न चुप होकर जीना ही उसे काम्य है। वह तो आमूल चूल परिवर्तन की नौका पर सवार होकर इस सिरे से उस सिरे तक और इस देह से उस देह के भीतर तक यात्रित होना चाहता है क्योंकि उसे भूखे बालकों के श्याम चेहरे कचोटते रहते हैं; जगत की स्याह सड़कों पर मानव भविष्यत् युद्ध में रत तप्त मुख दिखाई देते रहते हैं :

"उन पर प्यार आता है । कि जिनका तप्त मुख

सँवला रहा है; धूम लहरों में / कि जो मानव भविष्यत्-युद्ध में रत है,
जगत् की स्याह सड़कों पर।" और
"जहाँ सूखे बबूलों की कैंटीली पात / भरती है हृदय में धुंध डूबा दुःख
भूखे बालक के श्याम चेहरों साथ / मैं भी घूमता हूँ शुष्क आती याद मेरे देश भारत की।"

इतना ही नहीं मुक्तिबोध ने वर्गहीन स्वस्थ सामाजिक मूल्यों की नींव पर निर्मित समाज की कल्पना में उन सुविधाजीवियों और अवसरवादियों को बाधा माना है जो पूँजीवादी मनोवृत्ति की पूँछ पकड़कर जीना चाहते हैं।

4. पूँजीवादी व्यवस्था व मनोवृत्ति के प्रति घृणाभिव्यंजन :

मुक्तिबोध सच्चे अर्थों में जीवन मूल्यों की परम्परा के कवि थे। वे शोषण और अत्याचार की चक्की में पीसते जनसमाज के प्रति पर्याप्त सहानुभूतिशील थे और चाहते थे, कि जन समाज के सँवलाये और पथराये चेहरों पर सूर्याभा चमके और दमके सुख व संतोष की चाँदनी। इसी प्रक्रिया में उन्होंने उस व्यवस्था का विरोध किया; उस मनोवृत्ति के प्रति घृणा प्रकट की जो दूसरों के रक्त पर जी रही हैं। इसी पर रक्तजीवि व्यवस्था ने अपने प्रयत्नों से एक नपुंसक जमात खड़ी कर ली है, एक ऐसी परम्परा कायम कर ली है जो अपनी सुविधा के लिए उक्त व्यवस्था की हाँ में हाँ मिलाती रहती है। मुक्तिबोध की गहरी-तीखी नजर ने इन दोनों को देखा है और सपाट शब्द उगलती कलम से इनका घृणाभिषेक किया है। यह प्रक्रिया 'तारसप्तक' की 'पूँजीवादी समाज के प्रति' कविता से आरम्भ होती है। कवि ने पूँजीवादियों की मनोवृत्तियों को देखकर स्पष्ट भाषा में कहा है-

छोड़ो हाय, केवल घृणा और दुर्गन्ध / तेरी रेशमी वह संस्कृति अंध
देती क्रोध मुझको, खूब जलता क्रोध / तेरे रक्त में भी सत्य का अवरोध
तेरे रक्त से भी घृणा आती तीव्र / तुझको देख मितली उमड़ आती शीघ्र
तू है मरण तू है रिक्त तू है व्यर्थ / तेरा ध्वंस केवल एक तेरा अर्थ

मार्क्सीय प्रगतिशीलता की छाँह में पली मुक्तिबोध की आस्था का केन्द्र जन-मन है; पूँजीवादी व्यवस्था या उसका केन्द्रस्थ मानव नही है। असत्य और अत्याचार की काली करतूतोंवाले इस व्यवस्थाधीश की संस्कृति कवि की दृष्टि में शोषण संस्कृति है।

5. शोषितों और दलितों के प्रति संवेदना:

मार्क्सीय चिन्तन की भूमिका पर जहाँ मुक्तिबोध का कवि सर्वहारा-मजदूर वर्ग का अभिषेक सहानुभूति और करुण जल से करता है, वहीं उसे ऊँचा उठाना भी चाहता है। आर्थिक शोषण से उसे मुक्त भी करना चाहता है। इसी दृष्टिकोण के तहत मुक्तिबोध के काव्य में शोषित मानवों व उनके - जीवन के प्रति सहानुभूति; शिशुओं के प्रति वत्सल दृष्टि, पूँजीपतियों की हवस का शिकार बनी नारी के प्रति स्नेहिल दृष्टि और सजल दृष्टि मिलती है। उन्होंने शोषक वृत्ति व उसका शिकार बने - समाज का शब्दांकन भर नहीं किया है। अपितु उन्हें अपनी आई संवेदना भी अर्पित की है। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' कविता में श्रमिक वर्ग के शोषण स्थान-कारखाने के वातावरण का चित्र भी अंकित है तो हरिजन गलियों व पूलों के नीचे बहते गंदे नालों के सहारे पड़े रहने वाले मानवों की बस्ती का संदर्भ भी पूरी सहानुभूति के साथ चित्रित किया गया है। इसी क्रम में 'डूबता चाँद कब डूबेगा' कविता को भी विस्मृत नहीं किया जा सकता है। इसमें व्यंजित शोषण दो स्तरों पर है- मानवीय व्यक्तित्व को दषित वृत्तियों द्वारा शोषित किये जाने के सम्बन्ध से और पूँजीवादी व्यवस्था द्वारा - सामाजिक व्यक्ति-मानव के शोषण के सम्बन्ध से। कवि के सामने मूल प्रश्न यही है, कि मनुष्य रागद्वेष, ईर्ष्या, भय, कुत्सा और स्वार्थान्धता के लोह-पाश से कब और कैसे मुक्ति पा सकेगा? वह समय कब आयेगा जब यह सभ्यता मनुष्य की अस्तित्व रक्षा का प्रयत्न कर सकेगी? 'एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्मकथन' कविता में भी नौकरशाही व्यवस्था के माध्यम से शोषित संयुक्त परिवार की एक तस्वीर यों उभारी गई है : "अजीब संयुक्त परिवार है- औरतें व नौकर व मेहनतकश अपने ही वक्ष को। खरदरा वक्ष धड़। मानकर घिसती हैं, घिसते हैं। अपनी छाती पर जबर्दस्ती। विषदंती भावों का सर्पमुख बहुएँ मुँडेरों से कूद अरे, आत्महत्या करती हैं" मुक्तिबोध ने

पूँजीवादी व्यवस्था और सभ्यता से त्रस्त-ध्वस्त होते जीवन का जो करुणार्द्र चित्र प्रस्तुत किया है वह सहज ही हमारे मानस को बाँध लेता है। कवि की कलम से लिखी गई ये पंक्तियाँ पढ़िये: "दूर-दूर मुफलिसी के टे फटे घरों में। सुनहले चिराग बल उठते हैं। आधी अँधेरी शाम। ललाई में नहलाई जाकर परी झूक जाती है। थूहर के झुरमुटों से लसी हुई मेरी इस राह पर" इसी श्रृंखला में लिखी 'मेरे लोग' कविता में कवि का मन शोषित-दलित वर्ग के प्रति न केवल आत्मीय हो उठा है; अपितु संवेदना भी हो गया है : 'गिरिस्तिन मौन माँ बहनें। सड़क पर देखती हैं। भावमंथर काल पीड़ित ठठरियों की श्याम गोयात्रा। उदासी से रंगे गंभीर मुरझाये हुए प्यारे। गऊ चेहरे, निरख कर पिघल उठता मना"

6. सामान्य मानव के प्रति निष्ठा और समर्पण:

'मुक्तिबोध' मानवीय वेदना से प्रेरित और परिचालित मानवतावादी कवि के रूप में सामने आते हैं। उन्होंने समाज के सभी तबकों के व्यक्तियों की गतिविधियों, भावनाओं और अभिलाषाओं को गहरी नजर से देखा था। वे मामूली से मामूली आदमी के आन्तरिक भावों को समझने-बुझने वाले कवि थे। असल में उनकी निष्ठा थी ही सामान्य मानव के प्रति और वे समर्पित भी उसके लिए . ही थे। उनकी कविताएँ इस बात की गवाही देती हैं, कि वे निम्न वर्गीय व्यक्तियों को अपनी बाँहों में समेटने और खुद उनकी बाँहों में बँध जाने के लिए तैयार रहते थे। कारण उनके सारे रिश्ते इन्हीं सामान्य मानवों से थे और वे चाहते थे, कि इन्हीं के द्वारा उन्हें और उनकी कविताओं को जाना, समझा और परखा जाय। उन्होंने एक स्थान पर स्वीकार किया है : "विशाल श्रम शीलता की जीवंत। मूर्तियों के चेहरे पर झुलसी हुई आत्मा की अनगिन लकीरें। मुझे जकड़ लेती हैं अपने में, अपना सा जानकर बहुत पुरानी किसी निजी पहचान से' 'मुझे याद आते हैं' कविता में जो 'तारसप्तक' की 'मैं उनका ही होता' कविता का विस्तृत रूपान्तर है, कवि ने जन-साधारण के प्रति अपना विश्वास और उससे निर्मित व्यक्तित्व समर्पित कर दिया है। वे यहाँ तक लिख गये हैं, कि वे साधारण लोग ही मेरे हृदय से जुड़े हुए हैं और मेरी समस्त शब्द संपदा और भाव संपदा भी उन्हीं की है- उनके ही जीवन से संयुक्त है। 'मुझे याद आते हैं।' कविता में आया गर्भवती नारी; श्रमरता नारी और कर्मठ | नारी का जो चित्र अलग-अलग कारणों से लिया गया है वह भी कवि की जन सामान्य के प्रति निष्ठा भावना को ही निरूपित करता है। उनकी आस्था और जिजीविषा का केन्द्र बिन्दु भी इसी । कविता में छिपा है। वे लिख गये है : "यदि श्रमशीला नारी की आत्मा। सब अभावों को सहकर कष्टों को लात मार। निराशाएँ ठुकरा कर। किसी ध्रुव लक्ष्य पर। खिंचती सी जीती है। जीवित रह | सकता हूँ मैं भी तो वैसे ही" इसी कविता में कवि ने जो ग्रामीण परिवेश मूर्तित किया है वह तो । पूरी तरह प्रेमचंदीय साँचे में ढ़ला प्रतीत होता है। रास्ते पर आते जाते लटूधारी, बूढ़े पटेल बाबा, ऊँचे से किसान दादा, दाढ़ीधारी देहाती मुसलमान चाचा और माँ, बहनें और बेटियाँ आदि सभी । के प्रति कवि की निष्ठा और श्रद्धा-भावना उमड़ पड़ी है। उसकी सभी को सलाम, राम-राम करने | के इच्छा हो आई है।

7. संघर्ष और क्रांति की चेतना:

सामान्य जनों का हिमायती और शुभेच्छु मुक्तिबोध अपनी अनेक कविताओं में वर्ग-संघर्ष और क्रान्ति चेतना को वाणी दे सका है। उनकी कई कविताओं में शोषित वर्ग की संघर्ष प्रियता और क्रान्ति प्रियता अभिव्यक्त हुई है। 'लकड़ी का बना रावण', 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', 'ओ काव्यात्मन फणिधर', 'चकमक की चिनगारियाँ', 'शून्य' और 'चम्बल की घाटी' आदि महत्त्वपूर्ण कविताओं में मुक्तिबोध की क्रान्ति चेतना कहीं प्रत्यक्ष और कहीं सांकेतिक शैली में अभिव्यक्त होती है। 'चम्बल की घाटी' कविता को ही लीजिए। इसमें कवि ने शोषणप्रिय और सामंतशाही के प्रतीक महाप्रभओं के अत्याचारों से मुक्ति के लिए 'समूहीकरण' की बात कही है। यह वह कविता है जिसके सहारे मुक्तिबोध ने नवनिर्माण की भूमिका भी तैयार की है और वर्ग संघर्ष में व्यक्ति की सत्ता के स्वयं जाने में ही- उसके एक महत्तम उद्देश्य के हस्तगत हो जाने में ही सार्थकता का अहसास किया है। कविता के अन्तिम बंद तक पहुँचते-पहुँचते कवि ने अपेक्षित वर्ग संघर्ष के स्वरूप को इन पंक्तियों में स्पष्ट किया है : "अपने ही दर्दो के। लुटेरे इलाकों में जोरदार। आज जो गिरोह है। पीड़ित जनों को जनसाधारण को उनकी ही टोह है पूर्ण विनाश अनस्तित्व का चरम विकास है। इसीलिए ओ दूषद् आत्मन कट जाओ। टूट जाओ टूटने से जो विस्फोट शब्द होगा। गूंजेगा जग भर किन्तु अकेले की तम्हारी ही वह सिर्फ नहीं होगी कहानी।"

'चकमक की चिनगारियाँ' में भी कवि उद्विग्न मानस का प्रतीकत्व लेकर उपस्थित है। उसकी चिन्ता इस बात को लेकर है, कि देश में हर पल, हर मोड़ और हर गलियारे से 'हाय-हाय' की जो करुण-त्रासद ध्वनियाँ सुनाई दे रही हैं; वे कब अग्नि-ज्वाला को समर्पित होती हुई मानवीय भव्यता में बदलेगी? मुक्तिबोध ने अत्याचार की सरकार को बर्खास्त करने की माँग उठाते हुए एक सचेतन आन्दोलन का चित्रण किया है। उनके शब्द है :

शहरी रास्तों पर भीड़ से मुठभेड़ / जमकर पत्थरों की चीखती बारिश
व रायफल गोलियों के तेज नारंगी / धड़ाकों में उमड़ती आग की बौछार
उन पर प्यार आता है। की जो मानव भविष्यत् युद्ध में रत है
जगत की स्याह सड़कों पर!

'ओ काव्यात्मन फणिधर' शीर्षक कविता में मुक्तिबोध अपने फणिधर की प्रकृति वाले काव्यात्मन से 'मणिगण' को धारणा के लिए कहते हैं।

निष्कर्ष :

मुक्तिबोध की कवितामें प्रयोगवाद और प्रगतिवाद का रासायनिक मिश्रण है। किंन्तु दोनों की अतिरेकवादी प्रवृत्तियाँ उन्हे मान्य नहीं है । बेन छायावाद से संतुष्ट है, न प्रयोगवाद से और न प्रगतिवाद से वे सिद्धांत और व्यवहार दोनों में माक्सवादी है । वर्ग संघर्ष उनमें सर्वत्र मौजुद है। परिवर्तन के लिए शसस्त्र क्रांन्ति के समर्थक है । उनका मुल उद्देश्य है।

समस्या एक मेरे सभ्य नगरों और ग्रामों में सभी मानव सुखी सुंदर और शोषण मुक्त कब होंगे ?

मुक्तिबोध ने अपने चारों और फैली पुंजीवादी व्यवस्था का शोषण अत्याचार, भ्रष्टाचार, हताशा, आंतिक मूल्यदिनता, उपभोगवाद, आदि को को देखता देखाही नही, ज्ञानात्मक संवेदना के स्तर पर अनुभव किया था । चूकि वह सब से पहले कवि है । इसीलिए अभ्यंतारित भी किया था मुक्तिबोध की कविताओंका अपना एक पक्ष है । जनता का शोषित पीडित जनता का पक्ष मुक्तिबोध शोषित पीडित जनता के साथ खडे होते दिखाई देते है ।

संदर्भ ग्रंथ सूचि :

1. हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, ले.डॉ.शिवकुमार शर्मा, प्र.सं., 566-567, अशोक प्रकाशन, 26-15.
2. हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, ले.डॉ.शिवकुमार शर्मा, प्र.सं., 566-567, अशोक प्रकाशन, 26-15.
3. https://www.hindikunj.com/2021/06/muktibodh-ki-kavyagat-visheshta.html2m=1.
4. https://janchowk.com